[2010] 11 एस. सी. आर. 699

राजेश कोहली

बनाम

जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय व अन्य

(सिविल अपील संख्या 95/2004)

सितंबर 21, 2010

डॉ. मुकुंदकम शर्मा और अनिल आर. दवे, जे. जे

न्यायालय का निर्णय डॉ. मुकुंदकम शर्मा, जे. द्वारा सुनाया गया -

1. वर्तमान रिट याचिका याचिकाकर्ता द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत जम्मू और कश्मीर के उच्च न्यायालय [प्रत्यर्थी संख्या 1] के प्रशासनिक आदेश के खिलाफ दायर की गई है, जिसमें याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त करने की सिफारिश की गई है जो काम कर रहा था। एक परिवीक्षाधीन न्यायिक अधिकारी के रूप में, और साथ ही जम्मू और कश्मीर राज्य [प्रत्यर्थी संख्या 2] द्वारा ऐसी सिफारिश के आधार पर 03.07.2003 को जारी आदेश के खिलाफ, जिला और सत्र न्यायाधीश के रूप में याचिकाकर्ता की सेवाओं को समाप्त कर दिया गया। .

2. यहां याचिकाकर्ता को अस्थायी आधार पर जिला और सत्र न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए जम्मू और कश्मीर के उच्च

न्यायालय द्वारा सिफारिश की गई थी। उच्च न्यायालय की इस उपरोक्त सिफारिश को जम्मू और कश्मीर सरकार ने स्वीकार कर लिया और उन्हें अस्थायी आधार पर जिला और सत्र न्यायाधीश के रूप में नियुक्त करते हुए नियुक्ति का आदेश जारी किया गया। राज्य सरकार द्वारा जारी नियुक्ति के उक्त आदेश में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि याचिकाकर्ता जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायिक सेवा नियमों के तहत दो साल की अवधि के लिए परिवीक्षा पर रहेगा। उपरोक्त अस्थायी नियुक्ति के परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता को दिनांक 28.08.2000 के आदेश द्वारा तृतीय अतिरिक्त जिला सत्र न्यायाधीश, श्रीनगर के रूप में नियुक्त किया गया था। इसके बाद दिनांक 05.06.2001 को एक आदेश जारी करके उन्हें स्थानांतरित कर दिया गया और अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जम्मू के रूप में तैनात किया गया।

3. इस स्तर पर, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायिक सेवा नियमों के अनुसार, एक न्यायिक अधिकारी के लिए उसकी प्रारंभिक नियुक्ति के बाद परिवीक्षा की कुल अवधि तीन साल तक हो सकती है, जब उसकी प्रारंभिक नियुक्ति हो। पहली बार में उसकी परिवीक्षा अवधि दो वर्ष दी गई है और उसके बाद इसे एक वर्ष के लिए बढ़ाया जा सकता है। इस संबंध में, जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायिक सेवा नियमों के नियम 15 का संदर्भ लिया जा सकता है जो निम्नानुसार प्रदान करता है: -

"15. परिवीक्षा - (1) मूल रिक्तियों में सेवा में नियुक्ति पर सभी व्यक्तियों को परिवीक्षा पर रखा जाएगा। परिवीक्षा की अवधि, प्रत्येक मामले में, दो वर्ष होगी; बशर्ते कि वह अवधि जिसके लिए एक अधिकारी लगातार रहा हो परिवीक्षा अवधि की गणना के प्रयोजन के लिए, उसकी नियुक्ति से ठीक पहले स्थानापन्न करने को ध्यान में रखा जा सकता है।

(2) राज्यपाल न्यायालय के परामर्श से किसी भी समय परिवीक्षा की अवधि बढ़ा सकते हैं; बशर्ते कि परिवीक्षा की कुल अवधि सामान्यतः तीन वर्ष से अधिक नहीं होगी। परिवीक्षा के ऐसे विस्तार को मंजूरी देने वाले आदेश में यह निर्दिष्ट किया जाएगा कि इस तरह के विस्तार को समय-मान में वेतन वृद्धि के लिए गिना जाएगा या नहीं।

(3) यदि, जैसा भी मामला हो, परिवीक्षा अवधि या विस्तारित परिवीक्षा अवधि के दौरान या उसके अंत में, नियुक्ति प्राधिकारी को यह प्रतीत होता है कि परिवीक्षाधीन व्यक्ति ने अपने अवसरों का पर्याप्त उपयोग नहीं किया है या

अन्यथा असफल रहा है संतुष्टि देने के लिए उसकी सेवा तुरंत समाप्त की जा सकती है।

(4) जिस व्यक्ति की सेवाएं समाप्त कर दी गई हैं, वह किसी मुआवजे का हकदार नहीं होगा।"

4. याचिकाकर्ता को नियमानुसार वेतन वृद्धि भी दी गई। हालाँकि, जब याचिकाकर्ता अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश के रूप में कार्यरत था, तब उसके खिलाफ एक शिकायत प्राप्त हुई थी, जिसे श्री बाबू राम नाम के व्यक्ति ने दायर किया था, जिसे दिनांक 06.08.2001 के एक हलफनामे द्वारा विधिवत समर्थित किया गया था, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह तर्क दिया गया था कि याचिकाकर्ता जब उसके वकील के रूप में काम करते हुए धोखाधड़ी से 2.6 लाख रुपये की राशि निकाल ली। रजिस्ट्रार [न्यायिक], जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय के पास जमा किए गए जो शिकायतकर्ता - बाबू राम को देय थे।

5. उपरोक्त शिकायत की जांच उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार [सतर्कता] के माध्यम से की गई थी। जांच के समापन पर, अन्य बातों के साथ-साथ यह कहते हुए एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई कि यहां याचिकाकर्ता श्री राजेश कोहली, जिनकी नियुक्ति बाबू राम के वकील धारक श्री नारायण दत्त ने की थी, ने रजिस्ट्रार [न्यायिक] के समक्ष किसी और की पहचान बाबू राम के रूप में की थी। ,

जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय और बाबू राम के नाम पर एक अकाउंट पेयी चेक प्राप्त हुआ। उक्त रिपोर्ट में यह भी आरोप लगाया गया कि याचिकाकर्ता ने प्रतिरूपणकर्ता की पहचान बाबू राम के रूप में करने के अलावा, बैंक खाता खोलने के समय उसे विजय बैंक में भी पेश किया और इस तरह अवैध रूप से 2.6 लाख रुपये की राशि प्राप्त करने में कामयाब रहा, जबकि वास्तविक लाभार्थी - बाबू राम न तो रजिस्ट्रार [न्यायिक] या विजया बैंक के समक्ष उपस्थित हुए और न ही उन्हें उक्त राशि प्राप्त हुई। रजिस्ट्रार [सतर्कता] की उपरोक्त रिपोर्ट दिनांक 24.12.2001 को जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखी गई, जिन्होंने निर्देश दिया कि मामले को आवश्यक कार्रवाई के लिए अनुशासन समिति के अध्यक्ष को भेजा जाए। उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार [न्यायिक] को संबंधित पुलिस स्टेशन के एस एच ओ के समक्ष याचिकाकर्ता के खिलाफ आपराधिक शिकायत दर्ज करने के लिए कहा गया था।

6. इसके अलावा, उस अवधि के दौरान जब याचिकाकर्ता को प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश के रूप में जिला-कारगिल में तैनात किया गया था, वह 24.12.2001 से 18.01.2002 तक वहां शामिल नहीं हुआ और इस संबंध में उससे स्पष्टीकरण मांगा गया था। इसके बाद भी, जिला कारगिल के एक न्यायिक कर्मचारी से एक शिकायत प्राप्त हुई थी जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि याचिकाकर्ता कर्मचारियों के साथ दुर्व्यवहार कर रहा था और जिला कारगिल में बहुत सारी समस्याएं पैदा की थीं। ये

बातें याचिकाकर्ता के निजी रिकॉर्ड में दर्ज हैं. उसकी परिवीक्षा अवधि के शुरुआती दो साल पूरे होने के बाद, उसके रिकॉर्ड और उसके मामले को परिवीक्षा अवधि की पुष्टि या विस्तार या अन्यथा के लिए उसके मामले पर विचार करने के लिए पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखा जाना आवश्यक था। परिणामस्वरूप, उनके रिकॉर्ड पर 26.04.2003 को जम्मू में आयोजित पूर्ण न्यायालय की बैठक में उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया, जिसमें इसे निम्नानुसार हल किया गया: -

> "..... निर्णय लिया गया कि श्री राजेश कोहली, जिला एवं सत्र न्यायाधीश की सेवाएँ संतोषजनक नहीं पाई गईं और इस प्रकार अधिकारी की परिवीक्षा अवधि नहीं बढ़ाई गई... ..... उनकी सेवाएँ समाप्त की जाती हैं। ...."

अनुशंसा के साथ पूर्ण न्यायालय की बैठक का उपरोक्त प्रस्ताव राज्य सरकार को भेज दिया गया और राज्य सरकार ने 03.07.2003 को एक आदेश पारित किया, जिसके तहत याचिकाकर्ता की सेवाओं को माननीय उच्च न्यायालय की सिफारिश के अनुसार समाप्त कर दिया गया। यह कार्रवाई न्यायिक सेवा नियमों के नियम 15 के उप नियम 3 और 4 के तहत सक्षम प्राधिकारी को प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए की गई।

7. उपरोक्त आदेश दिनांक 03.07.2003 को अपनी सेवा से मुक्त करने के जारी होने से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने वर्तमान रिट याचिका दायर की जिस पर नोटिस जारी किया गया था। नोटिस की तामील पर, उच्च न्यायालय में उपस्थित हुए और उन परिस्थितियों को बताते हुए जवाबी हलफनामा भी दायर किया जिसके तहत याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त की गई।

8. याचिकाकर्ता हमारे सामने व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुआ और प्रस्तुत किया कि 03.07.2003 को जम्मू और कश्मीर सरकार द्वारा जारी किया गया उपरोक्त आदेश अवैध और अधिकार क्षेत्र के बिना है क्योंकि उक्त आदेश राज्यपाल द्वारा जारी नहीं किया गया था, बल्कि जम्मू सरकार द्वारा जारी किया गया था। & कश्मीर। उन्होंने यह भी कहा कि दिनांक 05.05.2003 के पत्र के तहत संप्रेषित उच्च न्यायालय की सिफारिश भी अवैध है और इसे रद्द किया जा सकता है क्योंकि उच्च न्यायालय ने उपरोक्त आदेश के तहत याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त कर दी है जिसके लिए उच्च न्यायालय के पास कोई शक्ति निहित नहीं है। न्यायालय अपने आदेश के तहत सेवा से छूट देगा। उनके द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया था कि उन्होंने 23.08.2002 को अपनी दो साल की परिवीक्षा अवधि पूरी कर ली थी और चूंकि 23.08.2002 से पहले और तुरंत बाद उनकी परिवीक्षा अवधि के विस्तार का कोई आदेश नहीं था, इसलिए उन्हें पुष्टि की गई समझी जानी चाहिए। न्यायिक सेवा और

इसलिए उसकी सेवा इस आधार पर समाप्त नहीं की जा सकती थी कि वह परिवीक्षा पर था।

9. याचिकाकर्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि उसकी सेवा एक कथित कदाचार, अर्थात् एक आपराधिक शिकायत के लंबित होने और अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ उसके कथित व्यवहार के आधार पर समाप्त कर दी गई थी और इसलिए, सेवा समाप्ति का उक्त आदेश एक प्रकृति का था। याचिकाकर्ता पर कलंक लगाकर सज़ा देना अवैध है और क्षेत्राधिकार के बिना है क्योंकि बर्खास्तगी का आदेश पारित करने से पहले याचिकाकर्ता को सुनवाई का कोई अवसर नहीं दिया गया था। उन्होंने यह भी कहा कि चूंकि उन्हें प्रत्यर्थी द्वारा वेतन वृद्धि दी गई थी, इसलिए यह साबित होता है कि प्रत्यर्थी उनकी सेवा से संतुष्ट थे और इसलिए, उनकी सेवा समाप्त करने का आदेश अधिकार क्षेत्र के बिना है।

10. प्रत्यर्थी, जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय की ओर से पेश वकील ने, हालांकि, उपरोक्त दलीलों का खंडन किया और याचिकाकर्ता की सेवा से जुड़े उच्च न्यायालय के रिकॉर्ड और सेवा से उसकी बर्खास्तगी के रिकॉर्ड भी हमारे सामने रखे। उन्होंने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता दो साल के बाद भी परिवीक्षा पर है क्योंकि प्रत्यर्थी द्वारा उसकी पुष्टि का कोई आदेश जारी या पारित नहीं किया गया था और उसकी सेवा असंतोषजनक सेवा के आधार पर उसकी परिवीक्षा की तीन साल की अवधि के भीतर

समाप्त कर दी गई थी। उन्होंने इस बात से इनकार किया कि विवादित आदेश कलंकपूर्ण या किसी भी तरह से दंडात्मक है या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का कोई उल्लंघन है। उन्होंने कहा कि चूंकि याचिकाकर्ता की सेवा असंतोषजनक सेवा के आधार पर समाप्त कर दी गई थी, इसलिए उसके खिलाफ कोई विभागीय कार्यवाही शुरू करने का सवाल ही नहीं उठता।

11. पक्षों की ओर से उपस्थित वकील की उपरोक्त दलीलों के आलोक में हमने अभिलेखों का अवलोकन किया है। याचिकाकर्ता को जम्मू-कश्मीर उच्च न्यायालय द्वारा अस्थायी आधार पर जिला एवं सत्र न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए अनुशंसित किया गया था। रिकॉर्ड पर रखा गया नियुक्ति पत्र स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि उनकी प्रारंभिक नियुक्ति न केवल अस्थायी आधार पर थी बल्कि उन्हें दो साल की अवधि के लिए परिवीक्षा पर भी रखा गया था। जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायिक सेवा नियमों का नियम 15 एक अधिकारी को आमतौर पर कम से कम तीन साल की अवधि के लिए परिवीक्षा पर रखने की अनुमति देता है।

12. याचिकाकर्ता को 24.08.2000 को अस्थायी रूप से जिला एवं सत्र न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया था और इसलिए उसने 23.08.2002 को दो साल की अपनी प्रारंभिक परिवीक्षा अवधि पूरी कर ली। इसके बाद उनकी सेवा की पुष्टि या अन्यथा या परिवीक्षा अवधि के विस्तार के लिए उनके मामले को 26.04.2003 को आयोजित बैठक में

उच्च न्यायालय की पूर्ण अदालत के समक्ष प्रशासनिक पक्ष में रखा गया था। पूर्ण न्यायालय ने याचिकाकर्ता के रिकॉर्ड पर विचार करने के बाद माना कि उसकी सेवा संतोषजनक नहीं पाई गई और इसलिए, उसकी परिवीक्षा अवधि नहीं बढ़ाई जाएगी और तदनुसार पूर्ण न्यायालय ने सिफारिश की कि याचिकाकर्ता की सेवाएं समाप्त कर दी जाएं। इस स्तर पर, यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि जब दिनांक 03.07.2003 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त कर दी गई थी, तो याचिकाकर्ता की परिवीक्षा अवधि 24.08.2000 से 05.05.2003 तक की अवधि के लिए बढ़ा दी गई थी। जिसके बाद उच्च न्यायालय द्वारा राज्य सरकार को उसके मामले को समाप्त करने की सिफारिश करते हुए एक अनुवर्ती आदेश जारी किया गया था। अंततः आदेश दिनांक 03.07.2003 द्वारा याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त कर दी गयी।

13. चूंकि नियम परिवीक्षा को एक और वर्ष के लिए बढ़ाने की अनुमति देता है और चूंकि उत्तरदाताओं द्वारा उसकी सेवा की पुष्टि करने वाला कोई पुष्टिकरण आदेश पारित नहीं किया गया था, इसलिए याचिकाकर्ता को प्रारंभिक दो वर्षों की समाप्ति के तुरंत बाद परिवीक्षा पर जारी माना जाएगा। परिवीक्षा। इस संबंध में, हम सत्य नारायण अठ्या बनाम उच्च न्यायालय म.प्र. के मामले का उल्लेख कर सकते हैं। (1996) 1 एससीसी 560 में रिपोर्ट किया गया जिसमें एक न्यायिक अधिकारी को उसकी दो साल की परिवीक्षा अवधि पूरी होने के बाद भी कोई पुष्टिकरण

पत्र नहीं दिया गया था। उक्त मामले में नियमों में प्रारंभिक दो वर्षों की परिवीक्षा अवधि को दो साल की अतिरिक्त अवधि के लिए बढ़ाने का प्रावधान है। इस न्यायालय ने उस मामले में पैराग्राफ 3 और 5 में कहा कि: -

> "3. .....उसे पढ़ने से स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि कैडर में नियुक्त प्रत्येक उम्मीदवार को शुरू में छह महीने की अवधि के लिए प्रशिक्षण से गुजरना होगा दो साल की अवधि के लिए परिवीक्षा पर नियुक्त किया जाता है। दो साल की परिवीक्षा पूरी होने पर, उच्च न्यायालय परिवीक्षा की पुष्टि या विस्तार करने के लिए खुला हो सकता है। परिवीक्षा अवधि के अंत में, यदि उसकी पुष्टि नहीं की जाती है अयोग्य पाए जाने पर, इसे दो वर्ष से अधिक की अवधि के लिए बढ़ाया जा सकता है। यह देखा गया है कि हालांकि विस्तार का कोई आदेश नहीं है, यह माना जाना चाहिए कि उसे दो साल की विस्तारित अवधि के लिए परिवीक्षा पर जारी रखा गया था। पूरा होने पर दो वर्ष, उसे स्वचालित रूप से पुष्टि नहीं माना जाना चाहिए। पुष्टि का कोई आदेश नहीं है। जब तक आदेश पारित नहीं हो जाता, तब तक उसे परिवीक्षा पर जारी रखा जाना चाहिए।

5. इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता को उसकी परिवीक्षा अवधि के दौरान सेवा से मुक्त करना उचित था। यह आवश्यक नहीं है कि उसके आचरण पर कोई आरोप लगाया जाए और जांच की जाए क्योंकि याचिकाकर्ता केवल परिवीक्षा पर है और परिवीक्षा की अवधि के दौरान, उच्च न्यायालय इस पर विचार करने के लिए खुला होगा कि क्या वह पुष्टि के लिए उपयुक्त है या उसे सेवा से सेवामुक्त कर दिया जाना चाहिए।"

14. परिवीक्षा अवधि के दौरान एक कर्मचारी निगरानी में रहता है और उसकी सेवा और उसके आचरण की जांच की जाती है। परिवीक्षा अवधि पूरी होने के आसपास परिवीक्षा अवधि के दौरान उसके कार्य और आचरण का मूल्यांकन किया जाता है और इस मूल्यांकन के आधार पर यह निर्णय लिया जाता है कि उसकी सेवा संतोषजनक है या नहीं। उसकी सेवा और ट्रैक रिकॉर्ड उसकी सेवा की पुष्टि की जानी चाहिए या उसकी सेवा की आगे की जांच के लिए विस्तार किया जाना चाहिए, यदि ऐसा विस्तार स्वीकार्य है या क्या उसकी सेवा समाप्त कर दी जानी चाहिए। परिवीक्षा के दौरान एक न्यायिक अधिकारी द्वारा प्रदान की गई सेवाओं का मूल्यांकन न केवल न्यायिक प्रदर्शन के आधार पर किया जाता है, बल्कि इस ईमानदारी के आधार पर भी किया जाता है कि किसी ने खुद को कैसे संचालित किया है।

15. पूर्ण न्यायालय द्वारा अपने प्रशासनिक पक्ष में लिया गया उपरोक्त संकल्प स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि उसकी पुष्टि या अन्यथा या उसकी परिवीक्षा अवधि को एक वर्ष के लिए बढ़ाने के मामले पर पूर्ण न्यायालय द्वारा विचार किया गया था, लेकिन चूंकि उसकी सेवा संतोषजनक नहीं पाई गई थी। रिकॉर्ड पर विचार करने पर, इसलिए, पूर्ण अदालत ने उसे सेवा में स्थायी न करने और उसकी सेवा समाप्त करने का निर्णय लिया और तदनुसार उसकी सेवा समाप्त करने की सिफारिश की। उच्च न्यायालय की उपरोक्त सिफारिश के आधार पर, जम्मू-कश्मीर सरकार द्वारा याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त करने का आदेश पारित किया गया था।

16. ये तथ्य स्पष्ट रूप से सिद्ध और स्थापित करते हैं कि याचिकाकर्ता की सेवा समाप्ति का आदेश जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय द्वारा जारी नहीं किया गया था, बल्कि केवल उसकी समाप्ति की सिफारिश की गई थी क्योंकि उसकी सेवा संतोषजनक नहीं पाई गई थी। उपरोक्त अनुशंसा को सरकार ने स्वीकार कर लिया और अंततः उनकी सेवा समाप्त करने का आदेश दिया। उपरोक्त आदेश सक्षम प्राधिकारी का आदेश था और जम्मू-कश्मीर सरकार द्वारा जारी किया गया था। चूँकि उक्त आदेश सक्षम प्राधिकारी द्वारा जारी किया गया था, यह एक वैध आदेश था और इसे इसी तरह माना जाना चाहिए, हालाँकि यह विशेष रूप से राज्यपाल के नाम पर जारी नहीं किया गया था।

17. वर्तमान मामले में, दो आदेशों को चुनौती दी गई है, एक, जो पूर्ण न्यायालय के संकल्प के आधार पर उच्च न्यायालय का आदेश था और दूसरा, जम्मू और कश्मीर सरकार द्वारा इस आधार पर जारी किया गया था कि वे कलंकपूर्ण आदेश थे.

18. हमारी सुविचारित राय में, उपरोक्त दोनों आदेशों में से किसी को भी कलंकपूर्ण आदेश नहीं कहा जा सकता क्योंकि कोई कलंक जुड़ा नहीं है। बेशक, उपरोक्त पत्र पूर्ण न्यायालय की बैठक के प्रस्ताव के मद्देनजर जारी किए गए थे, जहां उच्च न्यायालय की पूर्ण अदालत ने माना था कि याचिकाकर्ता की सेवा असंतोषजनक है। क्या परिवीक्षा अवधि बढ़ाई जा सकती है या नहीं बढ़ाई जानी चाहिए या उसकी सेवा की पुष्टि की जानी चाहिए या नहीं, इस पर उच्च न्यायालय की पूर्ण अदालत द्वारा विचार किया जाना आवश्यक है और ऐसा करते समय याचिकाकर्ता के सेवा रिकॉर्ड पर विचार करना आवश्यक है और यदि से सेवा रिकॉर्ड से पता चलता है कि याचिकाकर्ता की सेवा संतोषजनक नहीं है, उत्तरदाताओं के लिए उसकी असंतोषजनक सेवा के बारे में ऐसी संतुष्टि दर्ज करने के लिए खुला है और यहां तक कि आदेश में इसका उल्लेख करना याचिकाकर्ता पर कोई आक्षेप लगाने जैसा नहीं होगा और न ही ऐसा किया जा सकता है। कहा जा सकता है कि आदेश में यह कहना कि उसकी सेवा असंतोषजनक है, एक कलंकपूर्ण आदेश के समान है।

19. यह स्थिति अब एकीकृत नहीं है और यह अच्छी तरह से स्थापित है कि भले ही समाप्ति का आदेश संबंधित व्यक्ति की असंतोषजनक सेवा को संदर्भित करता है, इसे कलंकपूर्ण नहीं कहा जा सकता है। पवनेंद्र नारायण वर्मा बनाम संजय गांधी पीजीआई ऑफ मेडिकल साइंसेज (2002) 1 एससीसी 520 में रिपोर्ट की गई, इस अदालत ने उन परीक्षणों की विस्तार से व्याख्या की है जो यह निर्धारित करने के लिए लागू होंगे कि क्या किसी परिवीक्षाधीन व्यक्ति की सेवाओं को समाप्त करने वाला आदेश कलंकपूर्ण है। उस मामले के तथ्यों पर यह माना गया कि समाप्ति आदेश में व्यक्त की गई राय कि परिवीक्षाधीन व्यक्ति का "कार्य और आचरण संतोषजनक नहीं पाया गया है" प्रथम दृष्टया कलंकात्मक नहीं था और ऐसी परिस्थितियों में प्राकृतिक सिद्धांतों का पालन करने का प्रश्न उठता है। न्याय नहीं उठता. इस मामले में अदालत के पास यह निर्धारित करने का अवसर था कि क्या उसमें दिया गया आदेश सेवाओं की समाप्ति का सरल पत्र था या कलंकपूर्ण समाप्ति का पत्र था। उपरोक्त निर्णय के पैरा 21 में इस न्यायालय के विभिन्न पूर्व निर्णयों पर विचार करने के बाद इस न्यायालय द्वारा यह कहा गया था:

> (एससीसी पी. 528) " 21. यह निर्धारित करने के लिए कि क्या समाप्ति का आदेश वास्तव में दंडात्मक है, न्यायिक रूप से विकसित परीक्षणों में से एक यह देखना है कि क्या समाप्ति से पहले (ए) नैतिक अधमता या कदाचार

से जुड़े आरोपों की पूर्ण पैमाने पर औपचारिक जांच की गई थी (बी) (सी) अपराध की खोज में परिणत हुआ। यदि सभी तीन कारक मौजूद हैं, तो समाप्ति आदेश के रूप की परवाह किए बिना समाप्ति को दंडात्मक माना गया है। इसके विपरीत, यदि तीन कारकों में से कोई भी गायब है, तो समाप्ति को बरकरार रखा गया है।"

फैसले के पैरा 29 में यह इस प्रकार कहा गया है: (एससीसी पी. 529)

"29. हमारे सामने मामले के तथ्यों पर विचार करने से पहले, पहले परीक्षण से संबंधित एक और, प्रतीत होता है कि कठिन क्षेत्र को साफ़ करने की आवश्यकता है जैसे कि क्या। समाप्ति आदेश में भाषा कलंक के समान होगी? आम तौर पर जब एक परिवीक्षाधीन व्यक्ति की नियुक्ति समाप्त की जाती है तो इसका मतलब है कि परिवीक्षाधीन व्यक्ति नौकरी के लिए अयोग्य है, चाहे कदाचार या अयोग्यता के कारण, समाप्ति आदेश में इस्तेमाल की गई भाषा कुछ भी हो। हालाँकि सख्ती से कहें तो, कलंक समाप्ति में निहित है, एक साधारण समाप्ति कलंकात्मक नहीं है। एक समाप्ति आदेश जो स्पष्ट रूप से बताता है कि परिवीक्षाधीन नियुक्ति की

समाप्ति के प्रत्येक आदेश में क्या निहित है, वह भी कलंकपूर्ण नहीं है। पार्टियों द्वारा उद्धृत और नोट किए गए निर्णय हमारे द्वारा पहले भी ऐसा नहीं किया गया है। कलंक की श्रेणी में आने के लिए, आदेश ऐसी भाषा में होना चाहिए जो नौकरी के लिए अनुपयुक्तता के अलावा कुछ और आरोप लगाता हो।"

20. कृष्णदेवराय एजुकेशन ट्रस्ट बनाम एल.ए. बालकृष्ण के मामले में (2001) 9 एससीसी 319 में रिपोर्ट किया गया था, प्रत्यर्थी-सहायक प्रोफेसर की सेवाएं इस आधार पर समाप्त कर दी गई थीं कि उनकी कार्य दक्षता मानक के अनुरूप नहीं थी। इस न्यायालय ने माना कि नियोक्ता द्वारा आदेश में केवल यह उल्लेख करना कि कर्मचारी की सेवाएँ संतोषजनक नहीं पाई गईं, आदेश को कलंकित करने के समान नहीं होगा। इस न्यायालय ने पैरा 5 में इस प्रकार कहा: -

"5. इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि नियोक्ता परिवीक्षा पर किसी व्यक्ति की सेवाएं लेने का हकदार है। परिवीक्षा की अवधि के दौरान, भर्ती/नियुक्ति की उपयुक्तता देखी जानी चाहिए। यदि उसकी सेवाएं संतोषजनक नहीं हैं जो इसका मतलब है कि वह नौकरी के लिए उपयुक्त नहीं है, तो नियोक्ता को कारण बताकर सेवाएं समाप्त करने का

अधिकार है। यदि परिवीक्षा अवधि के दौरान समाप्ति बिना किसी कारण के होती है, तो शायद ऐसे आदेश को इस आधार पर चुनौती दी जाएगी मनमाना होना। इसलिए, आम तौर पर परिवीक्षा पर किसी कर्मचारी की सेवाएं तब समाप्त कर दी जाएंगी, जब उसे बिना कोई कारण बताए उस नौकरी के लिए उपयुक्त नहीं पाया जाएगा जिसके लिए वह नियुक्त किया गया था। यदि आदेश में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि उसकी सेवाएं नौकरी से बर्खास्त किया जा रहा है क्योंकि उसका प्रदर्शन संतोषजनक नहीं है, नियोक्ता पर यह आरोप लगाए जाने का जोखिम है कि आदेश ही कलंक लगाता है। हम यह नहीं कहते हैं कि ऐसा विवाद सफल होगा। आम तौर पर, इसलिए, यह प्राथमिकता दी जाती है कि आदेश ही इस बात का उल्लेख नहीं है कि सेवाएँ क्यों समाप्त की जा रही हैं।"

6. यदि ऐसे आदेश को चुनौती दी जाती है, तो नियोक्ता को वह आधार बताना होगा जिस पर परिवीक्षाधीन व्यक्ति की सेवाएं समाप्त की गईं। केवल इस तथ्य से कि चुनौती के जवाब में नियोक्ता कहता है कि सेवाएँ संतोषजनक नहीं थीं, इसका वास्तविक अर्थ यह नहीं होगा कि परिवीक्षाधीन व्यक्ति की सेवाएँ दंड के माध्यम से समाप्त की जा रही हैं।

परिवीक्षाधीन व्यक्ति परीक्षण पर है और यदि सेवाएँ संतोषजनक नहीं पाई जाती हैं, तो नियुक्ति पत्र के संदर्भ में, नियोक्ता के पास सेवाओं को समाप्त करने का अधिकार है।"

21. चैतन्य प्रकाश बनाम एच. ओंकारप्पा के मामले में (2010) 2 एससीसी 623 में रिपोर्ट की गई, अपीलकर्ता कंपनी द्वारा प्रत्यर्थी की सेवाएं समाप्त कर दी गईं। परिवीक्षा अवधि के दौरान, उनकी सेवाएँ संतोषजनक नहीं पाई गईं और उन्हें उनकी सेवाओं में सुधार के लिए पत्र भी दिए गए और उनकी सेवा अवधि भी बढ़ा दी गई और अंततः कंपनी ने उन्हें समाप्त कर दिया। अदालत ने कई मामलों का जिक्र करने के बाद कहा कि प्रत्यर्थी की बर्खास्तगी का विवादित आदेश कलंकपूर्ण नहीं है।

22. पंजाब राज्य बनाम भगवान सिंह के मामले में (2002) 9 एससीसी 636 में इस न्यायालय ने पैराग्राफ 4 और 5 में इस प्रकार कहा:

"4. ..... हमारे विचार में, जब एक परिवीक्षाधीन व्यक्ति को परिवीक्षा अवधि के दौरान सेवामुक्त कर दिया जाता है और यदि सेवामुक्ति का उद्देश्य, उसके कार्य का एक विशेष मूल्यांकन किया जाना है, और अधिकारियों ने सेवामुक्ति का आदेश पारित करते समय उसके कार्य के ऐसे मूल्यांकन का उल्लेख किया है, जिसे कलंक के समान नहीं माना जा सकता है।

5. आक्षेपित आदेश में दूसरा वाक्य यह है कि कुल मिलाकर अधिकारी का प्रदर्शन "संतोषजनक नहीं" था। यहां तक कि यह किसी भी तरह का कलंक नहीं है"

23. वर्तमान मामले में, समाप्ति का आदेश उसकी असंतोषजनक सेवा का नतीजा है, जो उसके समग्र प्रदर्शन और उसके आचरण के तरीके के आधार पर तय किया गया है। इस तरह की संतुष्टि, भले ही दर्ज की गई हो कि उसकी सेवा असंतोषजनक है, आदेश को कलंकपूर्ण या दंडात्मक नहीं बनाएगी जैसा कि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत किया जाना चाहिए। उपरोक्त संकल्प के आधार पर, आवश्यक आदेश जारी करने के लिए मामला राज्य सरकार को भेजा गया था।

24. याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए मुद्दों में से एक यह था कि उसे उसकी सेवा की ढाई साल की अवधि के दौरान दो वेतन वृद्धि दी गई थी। इसलिए उत्तरदाताओं द्वारा लिया गया यह रुख कि उनकी सेवा असंतोषजनक थी, याचिकाकर्ता के अनुसार गलत है क्योंकि उपरोक्त कार्रवाई के कारण उत्तरदाताओं की ओर से यह स्वीकार करना भी निहित है कि उनकी सेवा संतोषजनक थी।

25. याचिकाकर्ता की उपरोक्त दलील इस तथ्य के मद्देनजर किसी भी योग्यता से रहित है कि चूंकि याचिकाकर्ता सेवा में जारी था, इसलिए वेतन वृद्धि देने के मामले पर विचार किया जाना आवश्यक था, जिसे मंजूर

कर लिया गया। केवल वार्षिक वेतन वृद्धि देना किसी भी तरह से यह नहीं दर्शाता है कि परिवीक्षा अवधि पूरी होने के बाद उच्च न्यायालय की पूर्ण अदालत उसके रिकॉर्ड की जांच करने और उसके आधार पर यह निर्णय लेने में सक्षम नहीं थी कि उसकी सेवा दी जानी चाहिए या नहीं। उसकी परिवीक्षा अवधि की पुष्टि की जाए या उसे समाप्त कर दिया जाए अथवा क्या उसकी परिवीक्षा अवधि बढ़ाई जानी चाहिए। किसी न्यायिक अधिकारी को सेवा में स्थायी करने से पहले उसकी सेवा पर विचार करना और उसकी सराहना करना उच्च न्यायालय का गंभीर कर्तव्य है। जिला न्यायपालिका हमारी न्यायिक प्रणाली का आधार है और न्याय के दरवाजे तक प्रवेश के प्राथमिक स्तर पर स्थित है। देश के लोगों को न्याय तक पहुंच का अवसर प्रदान करने के लिए, जिन न्यायिक अधिकारियों को न्यायनिर्णयन का कार्य सौंपा गया है, उन्हें समाज के प्रति उनकी स्थिति और जिम्मेदारी के अनुरूप कार्य करना चाहिए।

26. ईमानदार न्यायिक अधिकारियों की आवश्यकता न केवल litigants की नजर में न्यायपालिका की छवि को मजबूत करने के लिए है, बल्कि न्यायाधीशों के बीच सत्यनिष्ठा, सदाचार और नैतिकता की संस्कृति को बनाए रखने के लिए भी है। न्यायपालिका के बारे में जनता की धारणा उतनी ही मायने रखती है जितनी विवाद समाधान में उसकी भूमिका। संपूर्ण न्यायपालिका की विश्वसनीयता अक्सर बेंच के कुछ सदस्यों द्वारा उल्लंघन के अलग-अलग कृत्यों से कम हो जाती है, और इसलिए

ईमानदारी, जवाबदेही और अच्छे आचरण के उच्च मानदंड बनाए रखना अनिवार्य है।

27 उपरोक्त चर्चा के आलोक में, याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए तर्क बिना किसी योग्यता के पाए गए और परिणामस्वरूप उन्हें खारिज कर दिया गया।

28 परिणामस्वरूप, इस रिट याचिका में कोई योग्यता नहीं है, जिसे खारिज कर दिया गया है, और पार्टियों को अपनी लागत स्वयं वहन करने के लिए छोड़ दिया गया है।

रिट याचिका खारिज की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी गुरजोत सिंह (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।